हनुमान्-जयन्ती के अवसर पर विशेष

हनूमन् यत्नमास्थाय दुःखक्षयकरो भव

किशोर कुणाल

“ जगद्गुरु रामानन्दाचार्य ने वैष्णवमताब्जभास्कर में हनुमज्जयन्ती की तिथि कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी निर्धारित की है; अतः सभी भक्तों को, विशेषकर रामानन्द सम्प्रदाय के मन्दिरों में, इसी तिथि को ‘हनुमान्-जन्मोत्सव’ मनाया जाना चाहिए।”

“आनन्द-रामायण” के सारकाण्ड में जगज्जननी जानकी अजेय आंजनेय को अशेष आशीष प्रदान करते हुए कहती हैं-

ग्रामारामपत्तनेषु व्रजखेटकसद्मसु।
वनदुर्गपर्वतेषु सर्वदेवालयेषु च ॥
नदीषु क्षेत्रतीर्थेषु मलाशयपुरेषु च।
वाटिकोपवनाश्वत्थ-वट-वृन्दावनादिषु ॥
त्वन्मूर्तिं पूजयिष्यन्ति मानवा विघ्नशान्तये।
भूतप्रेतपिशाचाद्या नश्यन्ति स्मरणात् तव॥

(1-12.147-149)

भावार्थ यह है कि प्रत्येक ग्राम, उद्यान, नगर, वन-वीथी, पर्वत, देवायतन तथा तीर्थस्थलादि में जन-जन द्वारा तुम्हारी मूर्ति का पूजन-अर्चन सकल विघ्नशमन हेतु होगा। सचमुच सीताजी का आशीर्वाद आज पूर्णतः चरितार्थ दृष्टिगोचर होता है और प्रत्येक नगर, ग्राम में और प्रत्येक राजमार्ग पर महावीर हनुमान् विराजमान दीखते हैं तथा उनकी कीर्ति-पताका दिग्दिगन्त में प्रसृत हो रही है। प्रसिद्ध पाटलिपुत्र का महनीय महावीर मन्दिर भारतवर्ष के शीर्ष मारुति-मन्दिरों में अपना विशिष्ट स्थान रखता है और यहाँ प्रतिवर्ष कार्तिक कृष्णपक्ष चतुर्दशी को हनुमज्जयन्ती धूमधाम से मनायी जाती है।

असल में, हनुमानजी की जयन्ती अनेक तिथियों में भक्तजन मनाते हैं, जिनमें चैत्र पूर्णिमा और कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी सबसे अधिक अनुसरणीय हैं। किन्तु जगद्गुरु रामानन्दाचार्य ने “वैष्णवमताब्जभास्कर” में हनुमज्जयन्ती की तिथि निम्नलिखित श्लोक में कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी निर्धारित की है; अतः सभी भक्तों को विशेषकर रामानन्द सम्प्रदाय के मन्दिरों में इसी तिथि को मनाया जाना चाहिए-

स्वात्यां कुजे शैवतिथौ तु कार्तिके
कृष्णेऽञ्जनागर्भत एव मेषके।
श्रीमान् कपीट् प्रादुरभूत्परन्तपो
व्रतादिना तत्र तदुत्सवं चरेत्॥

(चतुर्थ प्रश्न- 25)

अर्थात् कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की शैवतिथि अर्थात् चतुर्दशी तिथि में स्वाती नक्षत्र में मंगलवार के दिन मेष लग्न में अञ्जना के गर्भ से श्रीमान् कपिराज हनुमानजी का प्रादुर्भाव हुआ। व्रत आदि से उस दिन उनका उत्सव मनाना चाहिए।

रुद्रावतार हनुमान्

हनुमानजी रुद्र के एकादश अवतार माने जाते हैं। यह हनुमन्नाटक, शिवपुराण आदि ग्रन्थों में मिलता है। हनुमन्नाटक के पाँचवें अंक में हनुमानजी का एक विशेषण रौद्ररुद्रावतार का प्रयोग हुआ है–

किष्किन्धाद्रौ रौद्ररुद्रावतारं
दृष्ट्वा रामो मारुतिं वाक्यमूचे।
सीता नीता केनचित् क्वापि दृष्टा
हृष्टः कष्टं संहरन् प्राह वीरः॥

(हनुमन्नाटक, अंक 5, श्लोक 33)

अर्थात् किष्किन्धा के पर्वत पर रौद्र रुद्रावतार मरुत् के पुत्र हनुमानजी को देखकर राम ने कहा– किसी ने सीता का हरण कर लिया है, क्या आपने कहीं देखा? यह सुनकर वीर हनुमानजी ने अपना क्रोध का त्याग कर कष्ट को भी दबाते हुए कहा।

शिव–पुराण के रुद्रसंहिता के तृतीय खण्ड में 20वें अध्याय में भगवान् शिव के हनुमदवतार का वर्णन विस्तार के साथ वर्णित है। यहाँ कहा गया है

ततश्च समये तस्माद्धनूमानमिति नामभाक्।
शम्भुर्जज्ञे कपितनुर्महाबलपराक्रमः॥7॥
हनुमान् स कपीशानः शिशुरेव महाबलः।
रविबिम्बं बभक्षाशु ज्ञात्वा लघुफलं प्रगे।
देवप्रार्थनया तं सोऽत्यजज्ज्ञात्वा महाबलम्।
शिवावतारं च प्राप वरान् दत्तान् सुरर्षिभिः॥9॥

अर्थात् इसके बाद समय आने पर महादेव ने हनूमान् इस नाम को धारण करनेवाले अत्यन्त बलवान् तथा पराक्रमी वानर के शरीर का धारण किया। वानर के रूप में शिव बालरूप में सूर्य के बिम्ब को छोटा–सा फल समझकर प्रातःकाल में निगल गये। देवताओं के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर उन्होंने महाबलशाली सूर्य को छोड़ दिया और देवताओं तथा ऋषियों का वरदान पाकर शिव के अवतार के बने।

"स्कन्द–पुराण" के माहेश्वर खण्ड के केदार–माहात्म्य में वर्णन है कि एकादश रुद्र ही रामावतार में भगवान् विष्णु के सहायतार्थ हनुमान् के रूप में प्रकट हुए।

यो वै चैकादशो रुद्रो हनूमान् स महाकपिः।
अवतीर्णः सहायार्थं विष्णोरमिततेजसः॥

(8–99)

इसी प्रकार, संस्कृत जगत् में यह श्लोक अत्यन्त प्रसिद्ध है कि कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी के दिन मेष लग्न और स्वाती नक्षत्र में भगवान् शिव ही आंजनेय के रूप में प्रादुर्भूत हुए।

ऊर्जे कृष्ण–चतुर्दश्यां भौमे स्वात्यां कपीश्वरः।
मेषलग्नेऽञ्जनेर्गर्भात् प्रादुर्भूतः स्वयं शिवः॥

हनुमानजी के अनेक नामों की व्याख्या

आंजनेय के अनेक नामों में हनुमान् सर्वाधिक प्रचलित नाम है। इन्द्र के वज्र–प्रहार से शिशु आंजनेय की हनु (ठुड्ढी) टेढ़ी हो जाने के कारण उनका नाम हनुमान् पड़ा, ऐसी सामान्य धारणा है जो वाल्मीकि रामायण के इस श्लोक से भी पुष्ट होती है।

मत्करोत्सृष्टवज्रेण हनुरस्य यथा हतः।
नाम्ना वै कपिशार्दूलो भविता हनुमानिति॥

(उत्तर 37,11)

इन्द्र पवनदेव से कहते हैं कि मेरे हाथ से चलाये गये वज्र के कारण इस बालक की हनु (ठुड्ढी) टूट गयी है अतः इसका नाम हनुमान् होगा। इस व्याख्या को मान्य रखते हुए हनुमान् शब्द के अन्य अर्थ को भी समझना आवश्यक है; क्योंकि हनु+मत्=हनुमत्–हनुमान् यानी ठुड्ढी वाला अर्थ पर्याप्त नहीं है। हनु (ठुड्ढी) तो हर नर या वानर के होती है अतः उस अर्थ में हर नर या वानर हनुमान् है। हाँ, यदि हनु का अर्थ भग्न या टेढ़ी ठुड्ढी होता, तो हनुमान् के इस अर्थ का

पर्याप्त औचित्य होता। किन्तु ऐसा नहीं है, अतः हनुमान् का यथार्थ ढूँढना आवश्यक है। आंजनेय को स्वयं यह हनुमान् नाम अतिशय प्रिय है, क्योंकि अनेक अवसरों पर आत्म-परिचय में उन्होंने यही नाम बतलाया है। प्रभु श्रीराम और अनुज लक्ष्मण से प्रथम परिचय में उन्होंने अपना नाम हनुमान् ही बतलाया

प्राप्तोऽहं प्रेषितस्तेन सुग्रीवेण महात्मना।
राज्ञा वानरमुख्यानां हनुमान् नाम वानरः॥

(किष्किन्धा, 3,21)

अर्थात् मैं हनुमान् नामक वानर वानरों के राजा सुग्रीव के द्वारा भेजा गया हूँ तथा आपके पास आया हूँ।

सीताजी से भी परिचय देते समय वे कहते हैं-

अहं सुग्रीवसचिवो हनूमान् नाम वानरः।

(सुन्दर : 34, 38)

अर्थात् मैं हनुमान् नामक वानर सुग्रीव का सचिव हूँ।

पुनः राक्षसराज रावण की लंका में भी समुद्घोष करते हुए कहते हैं-

दासोऽहं कोसलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्टकर्मणः।
हनूमाञ्शत्रुसैन्यानां निहन्ता मारुतात्मजः॥

(सुन्दर : 42, 34)

अर्थात् मैं कौसल के राजा मृदुकर्मा राम का दास, मरुत् का पुत्र, शत्रुओं की सेना का वध करनेवाला हनुमान् हूँ।

हनुमान् शब्द के वास्तविक अर्थ की ओर आंजनेय निम्नलिखित श्लोक में स्वयं संकेत देते हैं -

हनूमानिति विख्यातो लोके स्वेनैव कर्मणा।

(सुन्दर 35, 83)

आंजनेय जानकीजी से कहते हैं कि अपने कर्मों के कारण मैं लोक में हनुमान् नाम से विख्यात हूँ। यह महत् कर्म महज मघवा के वज्र-प्रहार से भग्न हनु की घटना का नहीं हो सकता, बल्कि आंजनेय के अमित पराक्रम का प्रतीक होगा। इसके लिए हमें हनुमत् शब्द के कोशगत अर्थ और व्युत्पत्ति पर विचार करना होगा। मेदिनी-कोश में हनु के अनेक अर्थों में मृत्यु और अस्त्र का भी समावेश है-

हनुर्हट्टविलासिन्यां मृत्यावस्त्रे गदे स्त्रियाम्।
द्वयोः कपोलावयवे हीनं गर्ह्योनयोस्त्रिषु॥

यदि अस्त्र और मृत्यु अर्थ लिये जायें, तो हनुमान का अर्थ होगा- अस्त्रवान एवं मृत्युमान्। इन दोनों अर्थों से भी आंजनेय प्रक्षेपण, प्रहार एवं संहार के प्रचण्ड पराक्रम से युक्त प्रतीत होते हैं।

हनुमान् शब्द में मूल धातु है- हन्, जिसका धातुपाठ है- हन् हिंसागत्योः यानी हन् धातु का प्रयोग संहार और गति के अर्थ में होता है। इस धातु में उ प्रत्यय और 'मतुप्' तद्धित लगाने से हनुमत् शब्द निष्पन्न होता है। मतुप् प्रत्यय का विधान भूमा (अधिकता), श्रेष्ठता और नित्य योग में होता है। इस प्रकार हनुमत् शब्द का अर्थ है- संहार और वेग वाला। चूंकि आंजनेय सृष्टि के संहारक रुद्र के अवतार हैं, अतः उन्हें हनुमान् कहना सर्वथा उपयुक्त है।

वाल्मीकि रामायण में महर्षि अगस्त्य प्रभु श्रीराम से कहते हैं कि प्रलयकाल में भूतल को जलमग्न करनेवाले सागर, सभी लोकों को दग्ध कर डालने के लिए उद्यत अग्नि और सकल संसार के संहार के लिए

" इस प्रकार हनुमत् शब्द का अर्थ है- संहार और वेग वाला। चूंकि आंजनेय सृष्टि के संहारक रुद्र के अवतार हैं, अतः उन्हें हनुमान् कहना सर्वथा उपयुक्त है।"

"प्रभु श्रीराम आंजनेय से कहते हैं कि जब तक संसार में रामकथा प्रचलित है तब तक आप जीवित रहेंगे और आपकी कीर्ति भी शाश्वत रहेगी।"

प्रस्तुत काल के समान हनुमानजी के सामने कौन ठहर सकता है?

प्रवीविविक्षोरिव सागरस्य
लोकान् दिधक्षोरिव पावकस्य।
लोकक्षयेष्वेव यथान्तकस्य
हनूमतः स्थास्यति कः पुरस्तात् ॥

(उत्तर 36, 46)

इसी प्रकार गति में आंजनेय पवनदेव के सदृश आशुगामी हैं, अतः गति में भी अप्रतिमता के कारण हनुमान् नाम सर्वथा सार्थक है।

संस्कृत में गति शब्द के भी तीन अर्थ हैं- ज्ञान, गमन और प्राप्ति। मतुप् प्रत्यय 'तदस्य अस्ति' अर्थ में लगता है, जिसका सरल, सीधा हिन्दी अनुवाद 'वाला' होता है। इस प्रकार हनुमान् का अर्थ ज्ञानवाला, वेगवाला और प्राप्तिवाला होता है।

वाल्मीकि-रामायण में अगस्त्य ऋषि प्रभु श्रीराम से स्वयं कहते हैं कि हनुमानजी के विषय में आप जो कह रहे हैं, वह पूर्ण सत्य है। बल, बुद्धि और वेग में इनकी बराबरी करनेवाला कोई भी नहीं है।

सत्यमेतद् रघुश्रेष्ठ यद् ब्रवीषि हनूमति।
न बले विद्यते तुल्यो न गतौ न मतौ परः॥

(उत्तर 35-15)

आंजनेय असीम ज्ञान के भाण्डार हैं अतः वे ज्ञानिनामग्रगण्य माने जाते हैं। इनकी विद्या-विपुलता के बारे में महर्षि अगस्त्य प्रभु श्रीराम से कहते हैं कि सभी विद्याओं एवं तप के अनुष्ठान में केवल बृहस्पति ही इनके समकक्ष हैं और ये सभी (नौ) व्याकरणों के तत्त्ववेत्ता हैं तथा आपकी कृपा से अगली सृष्टि के विधाता यही हनुमानजी होंगे-

सर्वासु विद्यासु तपोविधाने
प्रस्पर्धतऽयं हि गुलं सुराणाम्।
सोऽयं नवव्याकरणार्थवत्ता
ब्रह्मा भविष्यत्यपि ते प्रसादात्॥

(उत्तर 36, 47)

प्राप्ति यानी उपलब्धि की दृष्टि से भी आंजनेय अप्रतिम हैं। इनकी उपलब्धियों की गणना में ग्रन्थ के ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं। किन्तु संकेत-रूप में वाल्मीकि रामायण का एक ही श्लोक पर्याप्त होगा। प्रभु श्रीराम आंजनेय से कहते हैं कि जब तक संसार में रामकथा प्रचलित है तब तक आप जीवित रहेंगे और आपकी कीर्ति भी शाश्वत रहेगी-

चरिष्यति कथा यावदेषा लोके च मामिका।
तावत् ते भविता कीर्तिः शरीरेऽप्यसवस्तथा॥

(उत्तर 40, 21)

कतिपय प्रसंगों की व्याख्या

यहाँ अनेक प्रसंगों की व्याख्या वैज्ञानिक रूप से प्रस्तुत की जा रही है। उदाहरणार्थ, केसरीनन्दन आंजनेय को पवनपुत्र मानने का क्या तात्पर्य है। हनुमानजी ने अपने जन्म के विषय में जो वृत्तान्त सुनाया है, उसके अनुसार प्रभास क्षेत्र के राजा थे इनके पिता केसरी। उन्होंने जब भरद्वाज ऋषि को मारने पर उतारू शंखशबल नामक गजराज को पछाड़कर उसका वध कर डाला, तब ऋषियों ने केसरी से प्रसन्न होकर

वर माँगने का निर्देश दिया। केसरी ने पवन के समान पराक्रमी पुत्र का वरदान माँगा और उन्हें वैसा तनय प्राप्त हुआ भी। अतः वे पवनपुत्र कहे जाने लगे।

अपनी संस्कृति में प्रायः प्रत्येक महापुरुष का जन्म किसी देव से जुड़ा हुआ है, जैसे युधिष्ठिर का धर्मराज से, अर्जुन और वाली का इन्द्र से, भीमसेन और हनुमान् का पवनदेव से, कर्ण और सुग्रीव का सूर्य से। इस संयोग का भाव यह है कि इनका जन्म उन देवों की कृपा से हुआ और वे गुणों में उनके अनुरूप हुए। आज भी भक्त अपने आराध्यदेव से संतति के लिए स्तुति करते हैं और उनके प्रसाद से प्राप्त सन्तान को उनका ही तनय मानते हैं। इस तथ्य को पुराण अपनी विशिष्ट शैली में सरल कथाओं के रूप में कहते हैं। पवनदेव के प्रसाद से आंजनेय का आविर्भाव हुआ। शक्र के वज्र-प्रहार के बाद पवनदेव के कोप के कारण ही सभी प्रमुख देवों को उन्हें प्रसन्न करने के लिए आंजनेय को अजेय बनाने हेतु विविध वरदान देने पड़े तथा बल एवं वेग में वे पवनदेव के तुल्य थे, अतः उन्हें पवन-पुत्र नाम से अभिहित करने का पूर्ण औचित्य बनता है।

इसी प्रकार आंजनेय के रूप के बारे में भी अनेक विचार प्रस्तुत किये जाते हैं। कोई उन्हें वानर मानता है, तो कोई उन्हें वानर जनजाति में उत्पन्न मानव! वाल्मीकि रामायण में यद्यपि दोनों मतों के पक्ष में साक्ष्य मिल जायेंगे, तथापि रामायण के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि वाली, सुग्रीव, अंगद, आंजनेय वानर-जनजाति के ही योद्धा थे, जिनका राष्ट्रीय प्रतीक लांगूल था, जिसे वे अतिशय प्रेम से धारण किये रहते थे। यदि वाली, सुग्रीवादि वानर पशु होते, तो उनकी भार्याओं- तारा, रुमा के भी पूँछ होती और उनका मुख भी विकृत होता। किन्तु वे बहुतेरी अन्य स्त्रियों की तरह सुन्दर और पुच्छविहीन थीं। वानरों के नर होने के तथ्य को युद्धकाण्ड (37-32) के उस श्लोक से भी समर्थन मिलता है जिसमें प्रभु श्रीराम ने निर्देश दिया था कि मैं लक्ष्मण, विभीषण और उनके चार मन्त्री ही मनुष्य रूप में युद्ध करेंगे और शेष सभी वानर का रूप धारण कर समर में भाग लेंगे। वानर-रूप ही श्रीराम-सेना का प्रतीक होगा-

न चैव मानुषं रूपं कार्यं हरिभिराहवे।
एषा भवतु नः संज्ञा युद्धेऽस्मिन् वानरे बले।
वानरा एव नश्चिह्नं स्वजनेऽस्मिन् भविष्यति॥

इसी प्रकार वाल्मीकि रामायण के पञ्चम काण्ड का नाम सुन्दरकाण्ड क्यों पड़ा, इसकी नूतन व्याख्या यहाँ की जा रही है। सुन्दर शब्द हनुमानजी का ही बोधक कैसे है इसकी भी व्याख्या की जा रही है

महावीर मन्दिर से 1996 ई. में "मारुति-चरितामृतम्" के नाम से एक विशालकाय ग्रन्थ का प्रकाशन मारुति-चरितामृतम् के नाम से हुआ, जिसमें संस्कृत के आर्ष-ग्रन्थों से हनुमानजी के चरित संकलित किये गये। इसमें वाल्मीकि रामायण के सुन्दर-काण्ड का नाम 'सुन्दरचरित' रखा गया। सुन्दरकाण्ड की अतिशय महत्ता प्राचीनकाल से ही रही है। इसके पाठ से सुख-शान्ति का साम्राज्य प्रसृत होता है तथा इसकी अप्रतिम रमणीयता के विषय में दो श्लोक प्रसिद्ध हैं-

सुन्दरे सुन्दरो रामः सुन्दरे सुन्दरी कथा।
सुन्दरे सुन्दरी सीता सुन्दरे किन्न सुन्दरम्॥
सुन्दरे सुन्दरी सीता सुन्दरे सुन्दरो कपिः।
सुन्दरे सुन्दरी वार्ता अतः सुन्दर उच्यते॥

इन श्लोकों में वाल्मीकि-रामायण के पाँचवें काण्ड का नाम सुन्दरकाण्ड रखने का औचित्य बतलाया गया है।

वाल्मीकि रामायण के अन्य काण्डों के नाम स्थानपरक (यथा- अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड, किष्किन्धाकाण्ड) अथवा घटनापरक (बालकाण्ड,

"चूँकि हनुमानजी ने प्रभु श्रीराम का सन्देश एकान्तवासिनी सीता माता को पहुँचा कर उनके सन्तप्त चित्त को असीम शीतलता प्रदान की तथा सीता माता का पता लगाकर प्रभु श्रीराम के विरह-दग्ध हृदय को शीतल किया; अतः वे 'सुन्दर' कहलाये और इसलिए इस काण्ड का नाम सुन्दरकाण्ड पड़ा।"

युद्धकाण्ड, उत्तरकाण्ड) हैं। किन्तु सुन्दरकाण्ड का नाम न तो स्थानपरक है और न घटनापरक। अतएव इस नाम के औचित्य को लेकर टीकाकार अपने विचार सदियों से प्रस्तुत करते आये हैं। किसी के अनुसार त्रिकूट पर्वत के तीन शिखर हैं- नील, सुबेल और सुन्दर, तथा सुन्दर शिखर पर अशोकवाटिका स्थित होने के कारण इसका नाम सुन्दरकाण्ड पड़ा है। किन्तु इस मान्यता के पक्ष में कोई भी प्रमाण वाल्मीकि रामायण में नहीं है।

एक अन्य धारणा के अनुसार खोयी हुई वस्तु प्राप्त करना सुन्दर कहलाता है (नष्टद्रव्यस्य लाभो हि सुन्दरः परिकीर्तितः) और चूंकि इस काण्ड में खोयी हुई सीता को पता चलता है। अतः इसका नाम सुन्दरकाण्ड है। कुछ विद्वानों के मतानुसार हनुमानजी रामायण-महामाला के सुन्दर रत्न हैं; और इस काण्ड के वास्तविक नायक वही हैं, अतः इसका नाम सुन्दर रखा गया है। इसमें संशय नहीं कि सुन्दर हनुमानजी का पर्याय है; किन्तु हमारी सीमित बुद्धि में सुन्दर की व्युत्पत्ति इस प्रकार है। उन्द् धातु में सु उपसर्ग और रक् प्रत्यय लगाकर सुन्दर बनता है। सु+उन्द्+रक्। (प्रयोगप्रवाहाद् दीर्घाभावः) सुष्टु उनत्ति- आर्दी-करोति, शैत्यं सरसतां च प्रयच्छति इति सुन्दरम् अथवा सुष्टु उन्दं राति-सुष्ठु शैत्यं ददाति इति सुन्दरम् शैत्यप्रदम्। चूँकि हनुमानजी ने प्रभु श्रीराम का सन्देश एकान्तवासिनी सीता माता को पहुँचा कर उनके सन्तप्त चित्त को असीम शीतलता प्रदान की तथा सीता माता का पता लगाकर प्रभु श्रीराम के विरह-दग्ध हृदय को शीतल किया; अतः वे सुन्दर कहलाये और इसलिए इस काण्ड का नाम सुन्दरकाण्ड पड़ा।

अनेक भक्त मरुत, मारुत और मारुति में अन्तर नहीं जानने के कारण अ-सम्यक् प्रयोग कर बैठते हैं। मरुत् और मारुत पवन का पर्याय है और मालति हनुमान् का। 'मरुतस्य अपत्यं पुमान मारुतिः' यानी मरुत का पुत्र मारुति होता है। अतः हनुमानजी के लिए प्रयोग करना हो, तब मारुति या मारुत-सुत, मरुत-सुत, मारुत-सुत, मरुत-सुत, या मारुत-नन्दन प्रयोग कर सकते हैं। गोस्वामीजी ने विनय-पत्रिका में लिखा है- "मंगल मूरति मारुत नंदन।"

हनुमानजी का एक प्रसिद्ध नाम महावीर है इसलिए बिहार में बहुत सारे मारुति-मन्दिरों को महावीर मन्दिर कहते हैं। पटना के प्रसिद्ध मन्दिर का भी यही नाम है- महावीर मन्दिर। गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी रामचरितमानस के मंगलाचरण में हनुमानजी की आराधना महावीर हनुमान के रूप में की है-

महावीर विनवउ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।

वाल्मीकि-रामायण में भी बहुत-से स्थलों पर हनुमानजी के लिए महावीर शब्द प्रयुक्त हुआ है। महावीरजी के नाम से अब तक कोई उपयुक्त

उद्घोष-वाक्य नहीं था, किन्तु उन्हीं की कृपा से एक दिन सहसा ऐसा जयघोष वाक्य कौंधा-

महावीरो हनूमान् विजयतेतराम्।

यानी महावीर हनुमानजी की जय हो, जय हो। आशा है, यह उद्घोष-वाक्य लोक-प्रचलित होगा।

संस्कृत प्रयोग के अनुसार संस्कृत में हनुमान् और हनूमान् दोनों मिलेंगे। दोनों रूप शुद्ध हैं और महर्षि वाल्मीकि ने भी दोनों रूपों का प्रयोग धड़ल्ले से किया है और कहीं कहीं एक ही श्लोक में दोनों रूप मिलते हैं, जैसे-

ततः कार्यसमासङ्गमवगम्य हनूमति।
विदित्वा हनुमन्तं च चिन्तयामास राघवः।।

(वा.रा. : 4.44.8)

हाँ, हिन्दी में हमलोगों ने हनुमान् ही रखा है, हनूमान् नहीं। जहाँ केवल हनुमान्, जाम्बवान् आदि प्रयोग हैं वहाँ हमने "मारुतिचरितामृतम्" के सम्पादन के क्रम में हलन्त न् का ही प्रयोग सर्वत्र किया है किन्तु जहाँ 'जी' जोड़ा गया है, वहाँ वर्तनी में अन्तर है। आचार्य सीताराम चतुर्वेदी द्वारा अनूदित वाल्मीकि-रामायण के अनुवाद में यह 'हनुमान्जी' के रूप में है और मेरी भूमिका में 'हनुमानजी'। हिन्दी के प्रवाह के अनुरूप 'हनुमानजी' अधिक उपयुक्त है, परन्तु आचार्यजी के प्रति अतिशय श्रद्धा के कारण 'हनुमान्जी' 'जाम्बवान्जी' आदि को यथावत् रखा गया है। इसी प्रकार अनुवाद में हिन्दी की अपनी शैली के अनुकूल उपर्युक्त ग्रन्थ में बाली का प्रयोग हुआ है, जबकि उसकी भूमिका में संस्कृत के अनुसार वाली। इसी प्रकार वाटिका, बाटिका, मधुवन, मधुबन जैसे कुछ शब्द दोनों रूपों में मिलेंगे। संज्ञा से संयुक्त विभक्तियों को पृथक् और सर्वनाम से युक्त विभक्तियों को समवेत रखा गया है।

पाठ हेतु महत्त्वपूर्ण मन्त्र

वाल्मीकि-रामायण में हनुमद्विषयक कुछ प्रेरक श्लोकों को यहाँ उद्धृत किया जाता है।

(1)

नमोऽस्तु रामाय सलक्ष्मणाय
देव्यै च तस्यै जनकात्मजायै।
नमोऽस्तु रुद्रेन्द्रयमानिलेभ्यो
नमोऽस्तु चन्द्रार्कमरुद्गणेभ्यः।।

इसे तारक मन्त्र कहा जाता है। कोई भी कार्य जो सिद्ध नहीं हो रहा हो, इस श्लोक के जप एवं ध्यान से सिद्ध हो जाता है। जब हनुमानजी लंका पहुँचे तथा इस नगर में सीताजी की खोज करने हुए रावण के राजप्रासाद में सर्वत्र खोज की। वाल्मीकि ने इस अन्वेषण के वर्णन में 13 सर्ग लिखे हैं। किन्तु तब भी सीतामाता का दर्शन नहीं हुआ। वे सोचते हैं कि अब क्या करें, प्राणत्याग कर लें या वैराग्य धारण कर लें। तभी उन्होंने इस श्लोक से सबकी स्तुति कर सीतामाता का अन्वेषण पुनः प्रारम्भ किया और सीतामाता का दर्शन तुरत हुआ। अतः यह तारक मन्त्र है।

(2)

इसी प्रकार हनुमानजी अशोकवाटिका का ध्वंस करने के बाद एक चैत्य पर विराजमान होकर गौरवपूर्वक यह उद्घोष करते हुए अपना परिचय देते हैं ताकि लंकावासी उनका परिचय तथा उनके आगमन का कारण जान जायें। ऐसी ओजस्विनी वाणी विश्व वाङ्मय में दुर्लभ है-

जयत्यतिबलो रामो लक्ष्मणश्च महाबलः।
राजा जयति सुग्रीवो राघवेणाभिपालितः।।
दासोऽहं कोसलेन्द्रस्य रामस्याक्लिष्टकर्मणः।
हनूमाञ्शत्रुसैन्यानां निहन्ता मारुतात्मजः।।
न रावणसहस्रं मे युद्धे प्रतिबलं भवेत्।
शिलाभिश्च प्रहरतः पादपैश्च सहस्रशः।।
अर्दयित्वा पुरी लङ्कामभिवाद्य च मैथिलीम्।

समृद्धार्थो गमिष्यामि मिषतां सर्वरक्षसाम्॥

अर्थात् अत्यधिक बलशाली श्रीराम और महाबली लक्ष्मण की जय हो। राघव के द्वारा संपोषित राजा सुग्रीव की जय हो। मैं मृदुकर्मा कोशलाधीश श्रीराम का दास हूँ। मैं मरुत्-पुत्र हनुमान् शत्रुओं की सेना का नाश करने की क्षमता रखता हूँ। युद्ध में जब मैं हजारों वृक्षों से तथा शिलाओं से प्रहार करने लगूँ तो हजारो रावण मेरा सामना नहीं कर सकेगा। मैं लंका को उजाड़कर, सीता को प्रणाम कर राक्षसों के देखते-देखते अपने काम को आगे बढाने के लिए चला जाऊँगा।

(3)

वाल्मीकि रामायण के युद्धकाण्ड में मेघनाद के बाण से सारी वानर सेना बेहोश पड़ी हुई है। यहाँ तक कि राम और लक्ष्मण भी अचेतावस्ता में हैं। केवल विभीषण आरै हनुमान् सचेत और सावधान हैं। वे मशाल लेकर निकले हैं- यह देखने के लिए कि कौन मृत या अचेत अवस्था में पड़े हैं। जाम्बवानजी अर्द्धचेतनावस्था में विभीषण की आहट परखकर पूछते हैं- 'कौन? विभीषणजी?'

विभीषण कहते हैं- 'हाँ, मैं विभीषण।'

जाम्बवान् ने पूछा- 'विभीषणजी, यह तो बतलाइए कि हनुमानजी जीवित हैं या नहीं?'

विभीषण ने पूछा- 'यह विचित्र बात है कि आप अपने राजा सुग्रीव का हाल नहीं पूछ रहे हैं, भगवान् राम और लक्ष्मण का कुशल-क्षेम नहीं पूछ रहे हैं, केवल पूछ रहे हैं कि हनुमानजी जीवित हैं या नहीं। ऐसा क्यो?'

जाम्बवानजी ने स्पष्ट किया- 'विभीषण, मैं ऐसा इसलिए पूछ रहा हूँ कि यदि हनुमानजी जीवित हैं तो हम सब मृतकों को वे जीवित कर देंगे और यदि वे मृत हैं, तो हम सब जीवितों को मरा हुआ ही समझिए।'

विभीषण ने जाम्बवानजी को आश्वस्त किया- 'हनुमानजी जीवित हैं और मेरे पास खड़े है।'

तब जाम्बवानजी हनुमानजी से अनुरोध करते हुए कहते हैं-

नान्यो विक्रमपर्याप्तस्त्वमेषां परमः सखा।
त्वत्पराक्रमकालोऽयं नान्यं पश्यामि कञ्चन॥

अर्थात् इस परिस्थिति में कोई दूसरा समुचित पराक्रम दिखानेवाला नहीं है, आप इनके परम मित्र हैं इसलिए आपके लिए यह पराक्रम दिखाने का अवसर है। मैं आपको छोड़कर दूसरे किसी को सक्षम नहीं देख रहा हूँ।

(4)

एक अन्य श्लोक जो हर भक्त को भीषण से भीषण संकट में भी त्राण दिलाता है वह है-

त्वमस्मिन् कार्यनिर्योगे प्रमाणं हरिसत्तम।
हनूमन् यत्नमास्थाय दुःखक्षयकरो भव॥

अर्थात् हे हनुमान्, इस कार्य के उपस्थित होने पर एकमात्र समर्थ व्यक्ति हैं, इसलिए प्रयत्न कर हमारे दुःखों को दूर करें।

इस मन्त्र की पृष्ठभूमि यह है कि जब हनुमानजी ने सीता माता का पता लगा लिया और उनसे मिलकर प्रभु प्रदत्त मुद्रिका उन्हें सौप दी तथा अपने पराक्रम का परिचय देने के लिए अशोकवाटिका का विध्वंस कर लंका को अग्निसात् कर दिया तब वे पुनः सीतामाता से मिलने गये। सीतामाता ने चूड़ामणि देते हुए हनुमानजी से यह बात कही।

(5)

जब प्रभु श्रीराम इस धरा धाम से जाने लगे तो हनुमानजी के कहकर गये-

जीविते कृतबुद्धिस्त्वं मा प्रतिज्ञां वृथा कृथाः।

मत्कथाः प्रचरिष्यन्ति यावल्लोके हरीश्वर।
तावद् रमस्व सुप्रीतो मद्वाक्यमनुपालयन्॥

(उत्तर. 108. 34)

अर्थात् हे हनुमन्, जबतक आप जीवित रहेंगे तब तक बुद्धि विलक्षण रहेगी- मेरी इस प्रतिज्ञा को व्यर्थ न होने दें। जब तक इस धराधाम पर मेरी कथा का प्रचार रहेगा तबतक आप भी मेरे वाक्यों का अनुपालन करते हुए, अर्थात् शरणागत व्यक्ति की रक्षा करने की प्रतिज्ञा का पालन करते हुए रमण करते रहेंगे।

अन्त में, हम इस प्रस्तावना का समापन कविवर 'रत्नाकर' की इस कविता से करते हैं-

एहौ हनुमान मान एतौ नौ बढ़ायो मग,
राखियै तो ध्यान आन-बान के निभाए कौ।
कहै रतनाकर बिसारियै न कानि, बर
बरद सँभारियै कृपाल के कहाए कौ॥
और की न पौरि पै पढ़यै मन छैयै यहै
आप ही बनैयै सब काम अपनाए कौ।
फेरियै निगाह ना गुनाह हूँ कियै पै लाख,
राखियै उछाह निज बाँह दै बसाए कौ॥

***

"छठ पर्व के कई रहस्य" पृ. 42 का शेषांश

धर्मं देहि यशो देहि षष्ठीदेव्यै नमो नमः॥66॥
देहि भूमिं प्रजां देहि विद्यां देहि सुपूजिते।
कल्याणं च जयं देहि षष्ठीदेव्यै नमो नमः॥67॥

= हिंसा-क्रोध से मुक्त षष्ठी देवी को नमस्कार। वे हमें धन, प्रिया, पुत्र, मान, जय, धर्म, यश, भूमि, प्रजा, विद्या, कल्याण, दें तथा शत्रुओं का नाश करें।

इति देवीं च संस्तूय लेभे पुत्रं प्रियव्रतः।
यशस्विनं च राजेन्द्रः षष्ठीदेव्याः प्रसादतः॥68॥

इस प्रकार देवी की स्तुति कर प्रियव्रत को पुत्र मिला तथा षष्ठी देवी के प्रसाद से यशस्वी हुये।

षष्ठीस्तोत्रमिदं ब्रह्मन् यः शृणोति तु वत्सरम्।
अपुत्रो लभते पुत्रं परं सुचिरजीविनम्॥69॥

= हे ब्रह्मन्! जो यह षष्ठी स्तोत्र 1 वर्ष तक सुनता है, उस अपुत्र को पुत्र मिलता है तथा जो पुत्र है वह चिरजीवी होता है।

वर्षमेकं च यो भक्त्या सम्पूज्येदं शृणोति च।
सर्वपापाद्विनिर्मुक्तो महावन्ध्या प्रसूयते॥70॥

= 1 वर्ष तक भक्ति सहित पूजा करने या सुनने से सभी पाप से मुक्ति होती है तथा महावन्ध्या को भी पुत्र होता है।

वीरं पुत्रं च गुणिनं विद्यावन्तं यशस्विनम्।
सुचिरायुष्यवन्तं च सूते देवीप्रसादतः॥71॥

= देवी के प्रसाद से पुत्र वीर, गुणी, विद्वान्, यशस्वी, चिरायु होता है।

काकवन्ध्या च या नारी मृतवत्सा च या भवेत्।
वर्षं श्रुत्वा लभेत् पुत्रं षष्ठीदेवी प्रसादतः॥72॥

काकवन्ध्या नारी या मृत पुत्र को जन्म देने वाली स्त्री को भी 1 वर्ष तक सुनने से षष्ठी देवी के प्रसाद से पुत्र होता है।

रोगयुक्ते च बाले च पिता माता शृणोति चेत्।
मासेन मुच्यते बालः षष्ठीदेवी प्रसादतः॥73॥

= रोगी बालक के माता-पिता सुनें तो षष्ठी देवी के प्रसाद से 1 मास में ही बालक रोगमुक्त होता है।

***